जीन संपादन की नई तकनीक क्रिस्पर

डॉ. सुशील जोशी

हाल में क्रिस्पर का काफी हल्ला रहा है। यह जेनेटिक संरचना में सटीक फेरबदल की एक ऐसी तकनीक है जो जीव विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव ला सकती है। इस वर्ष अप्रैल में चीन के शोधकर्ताओं ने इस तकनीक का उपयोग करके मानव भ्रूण में जेनेटिक परिवर्तन करके इस तकनीक की संभावनाओं को उजागर किया और तब से दुनिया भर में इसे लेकर बहस जारी है।

क्रिस्पर का पूरा नाम थोड़ा जटिल है - क्लस्टर्ड रेगुलरली स्पेस्ड पेलिंड्रोमिक रिपीट्स। मगर क्रिस्पर नाम ही प्रचलित है। दरअसल क्रिस्पर बैक्टीरिया की अपनी प्रतिरक्षा प्रणाली का एक हथियार है। बैक्टीरिया के डीएनए के विश्लेषण से पता चला था कि उसमें बीच-बीच में ऐसे हिस्से पाए जाते हैं जो बार-बार दोहराए जाते हैं। ये हिस्से लगभग 20-20 क्षार जोड़ियों से बने होते हैं। बैक्टीरिया डीएनए का यह एक अनोखा गुण है, कहकर बात आई-गई हो गई। फिर पता चला कि इन बारम्बार दोहराए जाने वाले हिस्सों के बीच में क्षार जोड़ियों के जो क्रम पाए जाते हैं वे भी लगभग इसी साइज़ के होते हैं। यह भी एक निरर्थक सूचना की तरह रह जाती अगर यह पता न चला होता कि बीच के इन अंतरालों की क्षार श्रृंखलाएं दरअसल उन वायरसों के डीएनए के टुकड़ों से मेंल खाती हैं जो इन बैक्टीरिया पर हमला करते है।

यहीं से बात शुरू हुई क्रिस्पर के महत्व की। विचार बना कि शायद बारम्बार दोहराए जाने वाले हिस्सों के बीच पाई जाने वाली क्षार श्रृंखलाएं उन हमलावर वायरसों से ही हासिल की गई हैं। तब इन हिस्सों को नाम दिया गया क्रिस्पर और बीच में पाई जाने वाली श्रृंखलाओं को स्पेसर कहा गया। और खोजबीन से पता चला कि इन क्रिस्पर के आसपास ही कुछ जीन्स होते हैं जो प्रोटीन बनाने का काम करते हैं। इन्हें क्रिस्पर एसोसिएटेड जीन्स (कास) कहा गया। यह भी पता चला कि ये प्रोटीन्स कोशिका में एंज़ाइम की तरह काम करते हैं और डीएनए को तोड़ सकते हैं।

धीरे-धीरे पूरी क्रियाविधि स्पष्ट हुई। बैक्टीरिया क्रिस्पर की स्पेसर श्रृंखलाओं की नकल बनाता है और हरेक को कास प्रोटीन के साथ जोड़ देता है। ये स्पेसर-कास संकुल कोशिका में चक्कर काटते हैं। यदि उन्हें अपने स्पेसर के समान श्रृंखला नज़र आती है तो वे उसे तोड़ देते हैं। अब जैसे पहले कहा गया, ये स्पेसर श्रृंखलाएं तो हमलावर वायरसों से हासिल की गई थी। यानी ये एक मायने में बैक्टीरिया के पास हमलावर वायरसों की फाइल है। जैसे ही उसे फिर से वैसी श्रृंखला दिखती है, उसे नष्ट कर

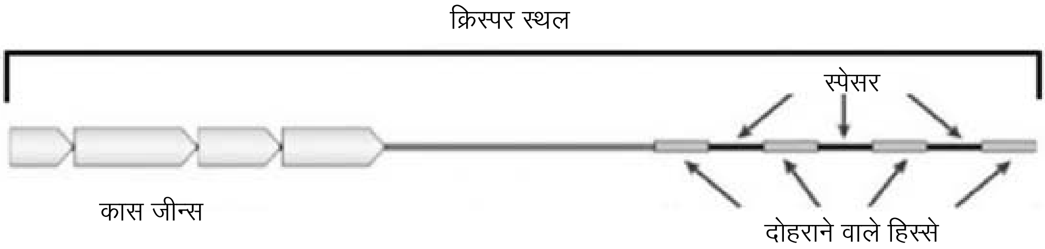

दिया जाता है।

इसके आधार पर ही वैज्ञानिकों ने क्रिस्पर तकनीक विकसित की है। तकनीक का आधार यह है कि स्पेसर और कास प्रोटीन मिलकर ऐसा संकुल बनाते हैं जो विशिष्ट स्थानों पर डीएनए को काट देता है। यह संकुल मूलतः डीएनए में वह श्रृंखला तलाश करता है जो स्पेसर से मेल खाती है।

तकनीक का उपयोग करते समय करना यह होता है कि जिस स्थान पर डीएनए को काटना है उसकी क्षार श्रृंखला को आरएनए के रूप में तैयार किया जाए। कास प्रोटीन को स्पेसर की जगह इस आरएनए टुकड़े के साथ जोड़ दिया जाता है। अब इस संकुल को कोशिका में प्रविष्ट कराया जाता है। जैसे ही इस संकुल को आरएनए के उस टुकड़े से मेल खाती क्षार श्रृंखला नज़र आती है वह उसे वहीं से काट देता है।

तो सवाल है कि ये डीएनए और आरएनए क्या हैं। डीएनए यानी डीऑक्सी राइबोन्यूक्लिक एसिड वह अणु है जो तय करता है कि हमारे शरीर में कौन-से प्रोटीन बनेंगे, कौन-से एंज़ाइम बनेंगे, कौन-सी रासायनिक क्रियाएं संभव होंगी। डीएनए वास्तव में चार क्षारों - एडीनीन (A), थायमीन (T), सायटोसीन (C) और ग्वानीन (G) - की एक श्रृंखला होती है (वास्तव में ये एक-दूसरे से लिपटी दो श्रृंखलाएं होती हैं)। क्षारों के क्रम से तय होता है कि डीएनए का कौन-सा हिस्सा किस प्रोटीन को बनाने का निर्देश दे सकता है। जब यह निर्देश प्रसारित करना होता है तो उस हिस्से की डीएनए दोहरी श्रृंखला को अलग-अलग किया जाता है और उसकी प्रतिलिपि बनाई जाती है। इस प्रतिलिपि को राइबोन्यूक्लिक एसिड या आरएनए कहते हैं। आरएनए का यह टुकड़ा केंद्रक से निकलकर कोशिका में पहुंचता है और वहां सम्बंधित प्रोटीन बनवाने का काम करता है।

क्रिस्पर तकनीक का उपयोग करने से पहले डीएनए के उस विशिष्ट हिस्से के क्षार क्रम का आरएनए बनाना होता है जिसका संपादन किया जाना है। वैसे यदि यह पता हो कि उस आरएनए में क्षारों का क्रम क्या है, तो यह टुकड़ा किसी प्रयोगशाला से प्राप्त किया जा सकता है। फिर आरएनए के इस टुकड़े को कास प्रोटीन से जोड़कर कोशिका में डाल दिया जाता है। आम तौर पर इस तकनीक में आरएनए का जो टुकड़ा डाला जाता है वह 20-30 क्षारों की श्रृंखला से बना होता है। यह इन 20-30 क्षारों के क्रम का मिलान करता है और डीएनए को वहीं से काटता है जहां हूबहू वैसा ही क्रम पाया जाए। इसलिए इस बात की संभावना बहुत कम होती है कि डीएनए को गलत जगह पर काट दिया जाएगा। वैसे यह संभावना रहती तो है।

आप देख ही सकते हैं कि इस तकनीक ने काम को कितना आसान बना दिया है। पहले यदि कोई वैज्ञानिक चाहे कि उसे ऐसा जंतु चाहिए जिसमें कोई जीन विशेष काम न करें, तो उसे काफी पापड़ बेलने पड़ते थे और जंतु की तीन पीढ़ियों के बाद ही उसे ऐसे मनपसंद जंतु मिल पाते थे। अब यह काम चंद महीनों में हो जाता है।

ऐसा नहीं है कि क्रिस्पर से पहले वैज्ञानिकों के पास जीन संपादन की कोई तकनीक नहीं थी। दो अन्य तकनीकें रही हैं ज़िंक फिंगर न्यूक्लिएज़ तकनीक और टेलन तकनीक। इसके अलावा पारंपरिक तकनीक भी रही है।

पारंपरिक रूप से यदि आपको कोई ऐसा जंतु (मान लीजिए चूहा) बनाना है जिसमें कोई एक जीन काम न करता हो तो आपको करना यह होगा कि पहले उस जीन की परिवर्तित डीएनए श्रृंखला तैयार करें, और फिर उसे चूहे के भ्रूण में डाल दें। अब यह संयोग की बात होगी कि वह जीन चूहे के भ्रूण में फिट हो जाएगा। इसके बाद जो चूहे बनेंगे उसमें दो तरह की कोशिकाएं होंगी - एक मूल जीन वाली और दूसरी परिवर्तित जीन वाली। ऐसी मिली-जुली जेनेटिक संरचना वाले जंतुओं को शिमेरा कहते हैं। इनमें से कुछ शिमेरा (संयोगवश) ऐसे होंगे जिनके प्रजनन अंगों में परिवर्तित जीन होंगे। अब इन चूहों को चुनकर उनको सामान्य चूहों से प्रजनन करने दिया जाएगा। अब जो चूहे पैदा होंगे उनमें संभावना है कि कुछ चूहों की हरेक कोशिका में एक सामान्य जीन तथा एक परिवर्तित जीन होगा। जब इनकी मदद से तीसरी पीढ़ी बनाई जाएगी तब जाकर कुछ ऐसे चूहे मिलेंगे जिनमें जीन की दोनों प्रतिलिपियां परिवर्तित वाली होंगी। यानी हर मोड़ पर संयोग और संभावना

का खेल है यह।

इसके बाद आई टेलन व ज़िंक फिंगर न्यूक्लिएज़ तकनीकें। इन दोनों में काम तो आसान हो गया मगर फिर भी श्रमसाध्य रहा। दोनों में ही ऐसे एंज़ाइम का उपयोग होता है जो डीएनए को विशिष्ट क्षार श्रृंखला पर तोड़ते हैं मगर इनमें करना यह होता है कि ऐसी प्रत्येक श्रृंखला के लिए अलग एंज़ाइम का निर्माण करना पड़ता है। क्रिस्पर ने पूरी प्रक्रिया को एकदम आसान बना दिया है। आपको सिर्फ इतना करना है कि मनचाहे जीन की क्षार श्रृंखला पता करके उसके साथ कास एंज़ाइम को जोड़ देना है और इस संकुल को कोशिका में प्रविष्ट करा देना है।

इस तकनीक की सरलता को देखते हुए वैज्ञानिकों को लग रहा है कि इसका चिकित्सा कार्य में उपयोग बहुत आसानी से हो सकेगा। यह चिंता का विषय भी है। इस तकनीक की मदद से यह बहुत आसान हो जाएगा कि किसी आनुवंशिक रोग से सम्बंधित जीन को निष्क्रिय कर दिया जाए या गलत जीन के स्थान पर सही जीन को प्रत्यारोपित कर दिया जाए। यह काम उन कोशिकाओं में भी किया जा सकता है जो प्रजनन में शरीक नहीं होंगी। इन कोशिकाओं को जीव विज्ञान की भाषा में कायिक कोशिकाएं कहते हैं। यदि कायिक कोशिकाओं में जीन का संपादन किया जाता है, तो वह उसी व्यक्ति तक सीमित रहेगा, अगली पीढ़ी में नज़र नहीं आएगा। मगर जैसा कि चीन में किए गए अनुसंधान से स्पष्ट हो गया है, क्रिस्पर की मदद से ऐसे परिवर्तन भ्रूण कोशिकाओं में भी किए जा सकते हैं, जहां से वे प्रजनन कोशिकाओं में पहुंच जाएंगे और अगली पीढ़ियों में बरकरार रहेंगे। इस तरह के स्थायी जीन संपादन ज़्यादा चिंता के विषय हैं।

एक बड़ी चिंता यह भी है कि क्रिस्पर तकनीक, अपनी सरलता के चलते, मनपसंद गुणों वाले शिशु (जिन्हें डिज़ाइनर शिशु कह सकते हैं) के 'निर्माण' का रास्ता खोल सकते हैं। मतलब ज़रूरी नहीं है कि बात सिर्फ व्यक्तियों में रोगों के इलाज पर रुक जाए। यह हमेशा के लिए किसी जीन को चुप कराने या नया जीन प्रत्यारोपित करने तक पहुंच सकती है। और बात सिर्फ रोगवाहक जीन तक नहीं बल्कि मनचाहे गुण (जैसे गोरापन) पैदा करने की कोशिशों तक जा सकती है। क्रिस्पर तकनीक की क्षमता का सबसे पहला प्रदर्शन 2012 में किया गया था। उसके बाद 2013 में इसी तकनीक की मदद से एक जीन को हटाकर उसकी जगह दूसरा जीन जोड़ने में सफलता मिली। फिर तो बाढ़ आ गई। पिछले दो वर्षों में क्रिस्पर को लेकर सैकड़ों शोध पत्र प्रकाशित हुए हैं। कुछ वैज्ञानिकों ने चूहों के डीएनए की मरम्मत करके उन्हें रोगों से मुक्ति दिलवाई है। कुछ वैज्ञानिकों ने फसलों में नए-नए जीन जोड़ने से सम्बंधित प्रयोग किए हैं और कुछ वैज्ञानिक कोशिश कर रहे हैं कि इस तकनीक की मदद से विलुप्त हो चुके मैमथ (हाथीनुमा एक जीव) को फिर से जिलाया जाए।

इस विषय पर विचार-विमर्श के लिए हाल ही में आयोजित एक सम्मेलन में वैज्ञानिकों ने स्पष्ट कहा है कि फिलहाल प्रजनन कोशिकाओं के साथ इस तरह के प्रयोग न किए जाएं और यदि किए जाएं तो उन्हें गर्भावस्था तक न ले जाया जाए। हां, वैज्ञानिकों ने इस तकनीक की क्षमता को कई क्षेत्रों में लाभदायक ढंग से उपयोग करने की बात भी स्वीकार की है। जैसे जीन संपादन के ज़रिए फसलों को उन्नत बनाना इसका एक उदाहरण हो सकता है। यह भी कहा जा रहा है कि रोगवाहक जंतुओं (जैसे मच्छर) में इस तरह के जीन वाले मच्छरों को प्रविष्ट कराया जा सकता है जो मच्छरों पर नियंत्रण में मददगार साबित होंगे। यह भी माना गया है कि व्यक्ति को किसी रोग (जैसे हीमोफीलिया, मधुमेह वगैरह) से छुटकारा दिलवाने के लिए इस तकनीक पर प्रयोग जारी रहने चाहिए।

इस संदर्भ में बौद्धिक संपदा अधिकारों के मामले भी उभरेंगे और उभर चुके हैं। इस मामले में विभिन्न देशों में अलग-अलग व्यवस्थाएं हैं, अलग-अलग कानूनी परिवेश हैं। जल्दी ही इसे लेकर भी अंतर्राष्ट्रीय विमर्श ज़रूरी हो जाएगा। ***(स्रोत फीचर्स)***